



निर्णय सुरक्षित दिनांक: 27.5.2026

निर्णय प्रदत्त दिनांक: 08.6.2026

2026:AHC:126158-DB

इलाहाबाद उच्च न्यायालय

बंदी प्रत्यक्षीकरण रिट याचिका संख्या - 89 / 2026

श्री निवास यादव उर्फ गुल्लू

...आवेदक(गण)

बनाम

अधीक्षक, जिला जेल, देवरिया और 3 अन्य

...प्रत्यर्थी(गण)

आवेदक(गण) के अधिवक्ता : अशोक कुमार यादव

प्रत्यर्थी(गण) के अधिवक्ता : ए.एस.जी.आई., जी.ए., मनीष पांडे

चैंबर में

माननीय न्यायमूर्ति सिद्धार्थ

माननीय न्यायमूर्ति विनय कुमार द्विवेदी

(माननीय न्यायमूर्ति सिद्धार्थ द्वारा प्रदत्त)

1. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री अशोक कुमार यादव; भारत संघ के विद्वान अधिवक्ता श्री मनीष पांडेय और राज्य-प्रतिवादियों की ओर से विद्वान प्रथम अपर शासकीय अधिवक्ता श्री रूपक चौबे को सुना गया। हमने रिकॉर्ड पर मौजूद पक्षकारों के अभिवचनों और हमारे समक्ष प्रस्तुत राज्य सरकार के रिकॉर्ड का भी सूक्ष्मता से परिशीलन किया है।

2. यह रिट याचिका निम्नलिखित राहतों की प्रार्थना करते हुए दायर की गई है:

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

(i) उत्प्रेषण की प्रकृति में एक रिट, आदेश या निर्देश जारी कर प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा पारित आक्षेपित आदेश दिनांक 28.11.2025 के साथ-साथ प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा पारित आक्षेपित आदेश दिनांक 16.10.2025 को भी निरस्त किया जाए।

(ii) परमादेश की प्रकृति में एक रिट, आदेश या निर्देश जारी कर प्रतिवादी संख्या 2 को निर्देशित किया जाए कि वह प्रतिवादी संख्या 3 द्वारा पारित आक्षेपित आदेश दिनांक 28.11.2025 के साथ-साथ प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा पारित आक्षेपित आदेश दिनांक 16.10.2025 के अनुसरण में याचिकाकर्ता को अवैध निरोध से मुक्त करे।

(iii) मामले की परिस्थितियों में इस माननीय न्यायालय द्वारा उचित समझा जाने वाला कोई अन्य रिट, आदेश या निर्देश जारी किया जाए।

(iv) याचिकाकर्ता को वाद-व्यय दिलाया जाए।

3. मामले के संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि याचिकाकर्ता को प्रतिवादी संख्या 2, जिला मजिस्ट्रेट, कुशीनगर द्वारा पारित निरोध आदेश दिनांक 28.10.2025 (अनुलग्नक संख्या 1) के आधार पर राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम के प्रावधानों के तहत निरुद्ध किया गया है। प्रभारी निरीक्षक पुलिस ने दिनांक 12.10.2025 को पुलिस अधीक्षक, कुशीनगर के समक्ष एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया, जो पुलिस अधीक्षक, कुशीनगर के साथ-साथ जिला मजिस्ट्रेट, कुशीनगर को संबोधित था, और उसके बाद पुलिस अधीक्षक, कुशीनगर ने उसी दिन इसे जिला मजिस्ट्रेट, कुशीनगर को अग्रेषित कर दिया। याचिकाकर्ता को जेलर, कुशीनगर द्वारा निरोध आदेश और निरोध के आधारों की प्रतियां प्रदान की गईं और प्रभारी निरीक्षक के प्रस्ताव के साथ पुलिस अधीक्षक, कुशीनगर की सिफारिश तथा दिनांक 12.10.2025 के आधारों की प्रतियां भी प्रदान की गईं।

4. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया है कि प्रतिवादी संख्या 2 ने बिना सोचे-समझे और भौतिक तथ्यों तथा दस्तावेजी अभिलेखों पर विचार किए बिना एक अवैध निरोध आदेश पारित किया, जो इस माननीय न्यायालय द्वारा निरस्त किए जाने योग्य है। याचिकाकर्ता को पुलिस स्टेशन कुबेरस्थान, जिला कुशीनगर में याचिकाकर्ता और सह-आरोपी सच्चिदानंद, चंद्रदीप, ज्ञान, गोविंद, राजू और कुछ अज्ञात आरोपियों के खिलाफ प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज करके बी.एन.एस. (भारतीय न्याय संहिता) की धारा 191(2), 103(1), 352, 351(3) और 3(5) के तहत केस अपराध संख्या 190 वर्ष 2025 में झूठा फंसाया गया है। सही तथ्य यह हैं कि अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

बयानकर्ता (याचिकाकर्ता की भाभी) ग्राम सेमरा हरदो, थाना कुबेरस्थान, जिला कुशीनगर की स्थायी निवासी है। इंद्रजीत का पुत्र उत्कर्ष, जो कि एक अभ्यस्त अपराधी था, परिवार को परेशान करता था और परिवार की बेटी तथा बहू के प्रति बुरी नीयत रखता था। दिनांक 29.08.2025 को उत्कर्ष सिंह बयानकर्ता के घर में उस समय घुस गया जब वह अकेली थी और उसने उसके प्रति गलत काम करने के इरादे से जानबूझकर उसे धक्का दिया। जब बयानकर्ता ने विरोध किया और शोर मचाया, तो उत्कर्ष गालियां देते हुए मौके से भाग गया। जब बयानकर्ता ने अपने पति को घटना की जानकारी दी और उसके पति ने उत्कर्ष के पिता, अर्थात् इंद्रजीत से शिकायत की, तो उत्कर्ष आक्रामक हो गया। उसी रात, उत्कर्ष कुल्हाड़ी, डंडा और लोहे की छड़ों से लैस अपने सहयोगियों के साथ जबरन घर में घुस गया। उन्होंने बयानकर्ता के साथ मारपीट शुरू कर दी और उसे घर से बाहर खींच लिया। उसकी चीख-पुकार सुनकर उसके देवर, श्री निवास और ज्ञानेंद्र उसे बचाने आए। इस पर उत्कर्ष ने श्री निवास पर कुल्हाड़ी और लोहे की छड़ से हमला कर दिया और ज्ञानेंद्र पर भी लोहे की छड़ से वार किया। उपरोक्त हमले के परिणामस्वरूप, श्री निवास को गंभीर चोटें आईं और ज्ञानेंद्र के शरीर पर भी गंभीर चोटें आईं। इस संबंध में बयानकर्ता ने संबंधित पुलिस अधिकारियों के समक्ष एक आवेदन प्रस्तुत किया, लेकिन कोई कार्रवाई नहीं की गई। इसके बजाय, बयानकर्ता के परिवार के सभी पुरुष सदस्यों के खिलाफ एक झूठा और तुच्छ आपराधिक मामला दर्ज कर लिया गया। उपरोक्त आपराधिक मामले में, मृतक उत्कर्ष ने दिनांक 29.08.2025 को श्री निवास पर कुल्हाड़ी और लोहे की छड़ से हमला किया था और ज्ञानेंद्र के साथ भी लोहे की छड़ से मारपीट की थी, जिससे दोनों को गंभीर चोटें आई थीं। सही तथ्य यह है कि याचिकाकर्ता को पुलिस द्वारा दिनांक 29.08.2025 को अस्पताल में भर्ती कराया गया था और हिरासत में लिया गया था। इसके बाद, पुलिस ने झूठा दिखाते हुए उसकी गिरफ्तारी दिनांक 31.08.2025 को रेलवे स्टेशन कठकुड़ियां के पास से होना दर्शाया और याचिकाकर्ता के विरुद्ध एक झूठी बरामदगी भी दिखाई।

5. इस प्रकार, याचिकाकर्ता निर्दोष है, और राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम, 1980 की धारा 3(2) के तहत की गई कार्यवाही अवैध, मनमानी और इस माननीय न्यायालय द्वारा निरस्त किए जाने योग्य है। संबंधित अधिकारियों द्वारा अनुशंसित प्रासंगिक और महत्वपूर्ण रिकॉर्ड न तो जिला मजिस्ट्रेट, कुशीनगर के समक्ष रखे गए थे, और न ही उत्तर प्रदेश राज्य सरकार तथा भारत संघ को अग्रेषित किए गए थे। परिणामस्वरूप, आक्षेपित आदेश पारित करते समय उक्त प्रासंगिक

अभिलेखों पर विचार नहीं किया गया। प्राधिकारी जिला मजिस्ट्रेट या राज्य और केंद्र सरकारों को थाना कुबेरस्थान, जिला कुशीनगर में बी.एन.एस. की धारा 191(2), 103(1), 352, 351(3) और 3(5) के तहत केस अपराध संख्या 190 वर्ष 2025 में जमानत आवेदन की प्रतियां प्रदान करने में भी विफल रहे। उपरोक्त मामले में याचिकाकर्ता को स्वयं गंभीर चोटें आईं और उसके परिवार के सभी पुरुष सदस्यों को जेल भेज दिया गया। याचिकाकर्ता को उपरोक्त मामले में झूठा फंसाया गया है। प्राधिकारियों के लिए यह अनिवार्य था कि वे याचिकाकर्ता के खिलाफ निरोध की कार्यवाही शुरू करते समय आपराधिक मामले से संबंधित सभी प्रासंगिक और महत्वपूर्ण तथ्यों को सक्षम प्राधिकारियों के समक्ष रखें। हालांकि, ऐसा नहीं किया गया, जिससे प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन हुआ और यह निरोध अवैध तथा असंवैधानिक हो गया। राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम की धारा 3(4) और 3(5) के प्रावधानों का उनकी वास्तविक भावना और मूल पाठ के अनुसार अनुपालन नहीं किया गया। प्रासंगिक, आवश्यक और महत्वपूर्ण अभिलेखों की प्रतियां राज्य सरकार को अग्रेषित नहीं की गई थीं और इसलिए, उन पर विचार नहीं किया गया। परिणामस्वरूप, कथित अनुमोदन अवैध तथा असंवैधानिक है, और निरोध आदेश कानून के विपरीत है।

6. राज्य सरकार ने सभी प्रासंगिक रिकॉर्ड और दस्तावेज केंद्र सरकार को प्रस्तुत या अग्रेषित नहीं किए। इस प्रकार, केंद्र सरकार द्वारा न तो उन पर विचार किया गया और न ही उन्हें आगे बढ़ाया गया। सक्षम प्राधिकारी ने एनएसए की धारा 3(5) के तहत रिपोर्ट पर निर्णय या उसका निस्तारण नहीं किया है। याचिकाकर्ता को अभी तक उक्त रिपोर्ट पर पारित आदेश की प्रति या उसके निस्तारण के संबंध में कोई जानकारी प्रदान नहीं की गई है। राज्य सरकार ने बिना सोचे-समझे और प्रासंगिक तथा आवश्यक दस्तावेजों और अभिलेखों पर विचार किए बिना केवल निरोध आदेश को मंजूरी देने की औपचारिकता पूरी की। इसलिए, निरोध आदेश इस माननीय न्यायालय द्वारा निरस्त किए जाने योग्य है। यह आगे प्रस्तुत किया गया है कि राज्य और केंद्र सरकारें याचिकाकर्ता के प्रतिवेदन का तुरंत और शीघ्रता से निस्तारण करने में विफल रहीं। किसी भी सरकार ने उसमें उल्लिखित तथ्यों पर ठीक से विचार या उनकी जांच नहीं की।

7. प्रतिवादियों ने याचिकाकर्ता के प्रतिवेदन को निस्तारित करने वाले आदेश की प्रति प्रदान नहीं की है, जिसे विलंबित, रूटीन और यांत्रिक तरीके से खारिज कर दिया गया था। ऐसा कृत्य भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के साथ-साथ एनएसए की धारा 10 का उल्लंघन करता है। इसके

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

बाद, याचिकाकर्ता ने दिनांक 25.10.2025 को जिला जेल, देवरिया के माध्यम से उत्तर प्रदेश राज्य सलाहकार बोर्ड के समक्ष एक आवेदन प्रस्तुत किया, जिसमें उसने अपनी शिकायतें व्यक्त कीं और राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम, 1980 की धारा 3(2) के तहत निरोध से अपनी रिहाई की प्रार्थना की। इस अवधि के दौरान, जिला मजिस्ट्रेट, कुशीनगर ने जिला जेल प्राधिकारियों को निर्देश देते हुए एक आदेश पारित किया कि वे याचिकाकर्ता को 27 आधारों के आधार पर राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम, 1980 की धारा 3(2) के तहत निरुद्ध रखें। इसके बाद, प्रतिवेदन को खारिज कर दिया गया, जो कृत्य अवैध, मनमाना और इस माननीय न्यायालय द्वारा निरस्त किए जाने योग्य है। प्रतिवादी संख्या 3 ने आदेश दिनांक 28.11.2025 के माध्यम से याचिकाकर्ता के आवेदन को अवैध और मनमाने ढंग से खारिज कर दिया और निर्देश दिया कि याचिकाकर्ता को दिनांक 16.10.2025 से 12 महीने की अवधि के लिए निरुद्ध रखा जाए। उक्त आदेश अवैध, मनमाना और निरस्त किए जाने योग्य है।

8. सही तथ्य यह है कि याचिकाकर्ता और उसका भाई पुलिस हिरासत में थे और उन्हें उपरोक्त मामले में झूठा फंसाया गया है। यह आगे कहा गया है कि याचिकाकर्ता के सिर में चोट आई थी और उसकी गिरफ्तारी के बाद उसका डॉक्टरी परीक्षण किया गया था। उसके शरीर पर कई चोटें पाए जाने के बावजूद, उसकी ओर से कोई प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज नहीं की गई। इस प्रकार, प्रतिवादी संख्या 2 और 3 द्वारा पारित आक्षेपित आदेश अवैध हैं और इस माननीय न्यायालय द्वारा निरस्त किए जाने योग्य हैं। याचिकाकर्ता ने संबंधित न्यायालय के समक्ष एक जमानत आवेदन दायर किया था, जिसे आदेश दिनांक 02.01.2026 के माध्यम से खारिज कर दिया गया था। याचिकाकर्ता का जमानत आवेदन वर्तमान में अपीलीय न्यायालय के समक्ष लंबित है। थाना कुबेरस्थान, जिला कुशीनगर में बी.एन.एस. की धारा 191(2), 103, 352, 351(3) और 3(5) के तहत केस अपराध संख्या 190 वर्ष 2025 में उसकी निकट भविष्य में जमानत पर रिहाई की कोई संभावना नहीं थी। हालांकि, जिला मजिस्ट्रेट ने बिना सोचे-समझे और याचिकाकर्ता की जमानत पर रिहाई की संभावना के संबंध में कोई संतुष्टि दर्ज किए बिना, आक्षेपित निरोध आदेश पारित कर दिया। इसलिए, निरोध आदेश इस माननीय न्यायालय द्वारा निरस्त किए जाने योग्य है। यह आगे प्रस्तुत किया गया है कि याचिकाकर्ता का कोई आपराधिक इतिहास नहीं है। यदि विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता द्वारा किसी आपराधिक इतिहास पर भरोसा

करने का प्रयास किया जाता है, तो उसे इस माननीय न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया जा सकता है, जिसके बाद याचिकाकर्ता उसका स्पष्टीकरण देगा।

9. विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता ने एक प्रति-शपथपत्र दायर किया है जिसमें यह कथन किया गया है कि याचिकाकर्ता और अन्य सह-आरोपियों सच्चिदानंद यादव उर्फ लालधर यादव, चंद्रदीप यादव, ज्ञानेंद्र उर्फ ज्ञान, गोविंद यादव और राजू यादव ने एक आपराधिक साजिश रचकर, दिनांक 29.08.2025 को रात्रि 20:00 बजे, प्रथम सूचनाकर्ता इंद्रजीत सिंह के पुत्र उत्कर्ष सिंह की धारदार और घातक हथियारों से बेरहमी से हत्या कर दी, जिसके कारण लोक व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो गई, यातायात ठप हो गया तथा आवश्यक वस्तुओं की आपूर्ति बाधित हो गई। सूचनाकर्ता इंद्रजीत सिंह की शिकायत पर, याचिकाकर्ता श्रीनिवास और अन्य सह-आरोपियों सच्चिदानंद, चंद्रदीप, ज्ञान, गोविंद, राजू तथा कुछ अज्ञात व्यक्तियों के खिलाफ थाना-कुबेरस्थान, जिला-कुशीनगर में दिनांक 30.08.2025 को दोपहर 01:56 बजे बी.एन.एस. की धारा 191(2), 103, 352, 351(3), 3(5) के तहत प्राथमिकी संख्या 190/2025 पंजीकृत की गई थी। विवेचना के उपरांत, उक्त मामले को बी.एन.एस. की धारा 190, 191(2), 191(3), 103(1), 352, 351(3), 3(5), 61(2) और सी.एल.ए. एक्ट (क्रिमिनल लॉ अमेंडमेंट एक्ट) की धारा 7 में संशोधित किया गया है। विवेचना के बाद, अभियुक्तों 1. सच्चिदानंद यादव उर्फ लल्लन 2. चंद्रदीप यादव 3. श्रीनिवास यादव उर्फ गुल्लू 4. ज्ञानेंद्र उर्फ ज्ञान 5. गोविंद यादव 6. राजू यादव के खिलाफ पर्याप्त सबूत पाते हुए दिनांक 09.10.2025 को बी.एन.एस. की धारा 190, 191(2), 191(3), 103(1), 352, 351(3), 3(5), 61(2) और सी.एल.ए. एक्ट की धारा 7 के तहत आरोप पत्र ए194/2025 प्रस्तुत किया गया है। सेमरा हरदो, थाना कुबेरस्थान, जिला कुशीनगर के निवासी स्वर्गीय कन्हैया के पुत्र याचिकाकर्ता श्रीनिवास यादव उर्फ गुल्लू को राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम, 1980 की धारा 3(2) के तहत निरुद्ध करने का आदेश प्रतिवादी संख्या 02 द्वारा दिनांक 16.10.2025 को पारित किया गया है। याचिकाकर्ता के उक्त निरोध आदेश की पुष्टि उत्तर प्रदेश सरकार के विशेष सचिव, गृह एवं गोपन विभाग द्वारा दिनांक 28.11.2025 को की गई थी। याचिकाकर्ता ने अन्य सह-आरोपियों के साथ मिलकर एक सुनियोजित आपराधिक साजिश को अंजाम दिया और पुरानी दुश्मनी के कारण धारदार व घातक हथियारों से लैस होकर सूचनाकर्ता इंद्रजीत सिंह के पुत्र उत्कर्ष सिंह की हत्या कर दी। उन्होंने दिनांक 29.08.2025 को

रात्रि 20:00 बजे उत्कर्ष सिंह पर कुदाल, कुल्हाड़ी और चाकू से वार किए, उसकी आंखें निकाल लीं और उसके कान काट दिए।

10. उत्कर्ष सिंह की इस जघन्य हत्या से सेमरा हरदो और आसपास के इलाके में लोक व्यवस्था भंग हो गई। आवश्यक वस्तुओं की आपूर्ति बाधित हो गई, और लोग इस डर से उस मार्ग पर यात्रा करने से डरते थे कि कहीं उनके साथ भी ऐसी ही घटना न घट जाए। क्षेत्र में लोक व्यवस्था बनाए रखने के लिए अतिरिक्त पुलिस बल तैनात किया गया था। कई दिनों के बाद क्षेत्र में लोक व्यवस्था बहाल हो सकी। याचिकाकर्ता और अन्य सह-आरोपियों द्वारा की गई जघन्य हत्या के बाद क्षेत्र में लोक व्यवस्था बनाए रखने के उद्देश्य से, दिनांक 16.10.2025 को प्रतिवादी संख्या 2 ने याचिकाकर्ता को राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम, 1980 की धारा 3(2) के तहत निरुद्ध करने का आदेश पारित किया। याचिकाकर्ता के उक्त निरोध आदेश की पुष्टि उत्तर प्रदेश सरकार के विशेष सचिव, गृह एवं सुरक्षा विभाग द्वारा दिनांक 28.11.2025 को की गई थी, और याचिकाकर्ता को 12 महीने की अवधि के लिए निरुद्ध रखने का आदेश पारित किया गया था। सूचनाकर्ता, इंद्रजीत सिंह ने दिनांक 30.08.2025 को थाना कुबेरस्थान, जिला कुशीनगर में एक मामला पंजीकृत कराया, जिसमें कहा गया था कि पूर्व में, हमारे घर के सामने रहने वाला यादव परिवार जबरन रास्ता बंद कर देता था और हमारे घर के सामने कचरा फेंकता था, जिसका मेरा बेटा बार-बार विरोध करता था, जिसके कारण यादव परिवार हमेशा परेशान रहता था और उसे गालियां भी देता था। दिनांक 29.08.2025 को सुबह यादव परिवार की भैंस हमारे खेत में चर रही थी, जब मेरे बेटे उत्कर्ष सिंह ने इस पर आपत्ति जताई, तो इन लोगों ने मेरी मां और बहन को गालियां देना शुरू कर दिया और आज दिनांक 29.08.2025 को सुबह करीब 07:38 बजे सच्चिदानंद यादव ने मेरे मोबाइल पर मोबाइल नंबर 9792503912 से फोन किया और मुझे धमकी देने लगा कि तुम्हारा बेटा उत्कर्ष सिंह पहले मुझे गाली दे रहा था और आज मेरी भैंस तुम्हारे खेत में चली गई थी, उसे समझा लो अन्यथा उसे किसी भी समय जान से मारा जा सकता है। इसके कुछ ही समय बाद, रात करीब 8:00 बजे, कन्हैया यादव के बेटों श्रीनिवास, सच्चिदानंद, चंद्रदीप, ज्ञान और राम प्रताप यादव के बेटों गोविंद, राजू तथा कुछ अज्ञात व्यक्तियों द्वारा मेरे बेटे को मेरे घर से लगभग 30 से 50 मीटर दूर खाद के गड्ढे में खींच लिया गया, जो धारदार हथियारों से लैस थे, जिन्होंने मेरे बेटे पर कुल्हाड़ी और चाकू से वार किया, उसकी आंखें निकाल लीं, उसके पैरों और जांघों पर जानलेवा हमला किया, उसके

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

कान काट दिए और मौके पर ही उसकी हत्या कर दी। शोर सुनकर ज्ञानेश्वर, विकास, सत्यार्थ और कुछ अन्य ग्रामीण मौके पर पहुंचे। आरोपी हथियार लहराते हुए यह कहते हुए भाग गए कि, "अभी तो इसकी हत्या हुई है। इसके पूरे परिवार को मार दिया जाएगा।" एम्बुलेंस बुलाई गई और उत्कर्ष सिंह को पडरौना के जिला अस्पताल ले जाया गया, जहाँ डॉक्टरों ने उसे मृत घोषित कर दिया। सूचनाकर्ता की शिकायत पर, दिनांक 30.08.2025 को दोपहर 01:56 बजे अभियुक्तों 1. श्रीनिवास यादव 2. सच्चिदानंद 3. चंद्रदीप 4. ज्ञान 5. गोविंद 6. राजू 7. कुछ अज्ञात व्यक्तियों के खिलाफ बी.एन.एस. की धारा 191(2), 103, 352, 351(3), 3(5) के तहत प्राथमिकी संख्या 190/2025 पंजीकृत की गई। याचिकाकर्ता श्रीनिवास यादव उर्फ गुल्लू ने अन्य सह-आरोपियों के साथ मिलकर एक आपराधिक साजिश रची और पुरानी रंजिश के कारण धारदार व घातक हथियारों से लैस होकर सूचनाकर्ता इंद्रजीत सिंह के पुत्र उत्कर्ष सिंह की हत्या कर दी। उन्होंने 29 अगस्त, 2025 को रात्रि 20:00 बजे उत्कर्ष सिंह पर कुल्हाड़ी, फरसे और चाकू से वार किए, उसकी आंखें निकाल लीं और उसके कान काट दिए। उत्कर्ष सिंह की इस जघन्य हत्या से सेमरा हरदो और आसपास के इलाके में लोक व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो गई। आवश्यक वस्तुओं की आपूर्ति बाधित हो गई, और लोग इसी तरह की घटना के डर से उस मार्ग पर यात्रा करने से डरते थे। दिनांक 16 अक्टूबर, 2025 को प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा याचिकाकर्ता को राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम, 1980 की धारा 3(2) के तहत निरुद्ध करने का आदेश पारित किया गया था। उक्त आदेश की पुष्टि उत्तर प्रदेश सरकार के विशेष सचिव, गृह एवं गोपन विभाग द्वारा दिनांक 28.11.2025 को की गई है और प्रतिवादी संख्या 02 द्वारा पारित आदेश दिनांक 16.10.2025 से 12 महीने की अंतिम अवधि के लिए उसे निरोध में रखने का आदेश पारित किया गया है।

11. प्रतिवादी संख्या 4 की ओर से भी एक प्रति-शपथपत्र दायर किया गया है जिसमें यह कहा गया है कि केंद्र सरकार ने दिनांक 16.10.2025 के निरोध आदेश की पुष्टि कर दी है और याचिकाकर्ता द्वारा निरोध आदेश को रद्द करने के अनुरोध को खारिज कर दिया है।

12. विरोधी पक्षों की दलीलें सुनने और रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री का अवलोकन करने के बाद, हम पाते हैं कि राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम का निर्माण कानून-व्यवस्था के उल्लंघन के कारण व्यक्तियों को फंसाने के लिए नहीं किया गया है। यह स्पष्ट है कि याचिकाकर्ता को एकल हत्या के एक मामले में, जो कि केस अपराध संख्या 190 वर्ष 2025 है, फंसाए जाने के कारण उसे

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम के तहत निरुद्ध किए जाने का निर्देश दिया गया है। इस मामले में याचिकाकर्ता स्वयं भी घायल हुआ था। इस संबंध में कानून भली-भांति सुस्थापित है।

13. प्रतिवादियों की ओर से दायर प्रति-शपथपत्रों में यह स्पष्ट नहीं किया गया है कि वर्तमान मामले ने "लोक व्यवस्था" को किस प्रकार खतरे में डाला।

14. विरोधी पक्षों की दलीलों पर विचार करने से पहले देश के मूल कानून पर एक नज़र डालना आवश्यक है। भारत का संविधान जीवन और स्वतंत्रता के अधिकार की गारंटी देता है और साथ ही गिरफ्तारी व निरोध के विरुद्ध विशिष्ट सुरक्षा उपाय भी प्रदान करता है। हालांकि, मौलिक अधिकारों के इसी अध्याय में, संविधान में अनुच्छेद 22 (3) से (7) शामिल हैं जो स्पष्ट रूप से निवारक निरोध को अधिकृत करते हैं:

"(1) किसी भी व्यक्ति को जिसे गिरफ्तार किया गया है, ऐसी गिरफ्तारी के कारणों के बारे में यथाशीघ्र सूचित किए बिना हिरासत में नहीं रखा जाएगा, और न ही उसे अपनी पसंद के कानूनी व्यवसायी (अधिवक्ता) से परामर्श करने और उसके द्वारा अपना बचाव कराने के अधिकार से वंचित किया जाएगा।

(2) प्रत्येक व्यक्ति जिसे गिरफ्तार किया गया है और हिरासत में रखा गया है, उसे ऐसी गिरफ्तारी के चौबीस घंटे की अवधि के भीतर (गिरफ्तारी के स्थान से मजिस्ट्रेट की न्यायालय तक की यात्रा के लिए आवश्यक समय को छोड़कर) निकटतम मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किया जाएगा और ऐसे किसी भी व्यक्ति को मजिस्ट्रेट के प्राधिकार के बिना उक्त अवधि से अधिक समय तक हिरासत में नहीं रखा जाएगा।

(3) खंड (1) और (2) की कोई भी बात लागू नहीं होगी— [...] (ख) किसी भी ऐसे व्यक्ति पर जिसे निवारक निरोध का प्रावधान करने वाले किसी कानून के तहत गिरफ्तार या निरुद्ध किया गया है।

(4) निवारक निरोध का प्रावधान करने वाला कोई भी कानून किसी व्यक्ति को तीन महीने से अधिक की अवधि के लिए निरुद्ध करने को अधिकृत नहीं करेगा जब तक कि — (क) ऐसे व्यक्तियों से बने एक सलाहकार बोर्ड, जो उच्च न्यायालय के न्यायाधीश हैं, या रहे हैं, या नियुक्त होने की योग्यता रखते हैं, ने उक्त तीन महीने की अवधि की

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

समाप्ति से पहले यह रिपोर्ट न दी हो कि उसकी राय में ऐसे निरोध के लिए पर्याप्त कारण हैं: बशर्ते कि इस उप-खंड की कोई भी बात संसद द्वारा खंड (7) के उप-खंड (ख) के तहत बनाए गए किसी कानून द्वारा निर्धारित अधिकतम अवधि से अधिक समय तक किसी व्यक्ति को निरुद्ध करने के लिए अधिकृत नहीं करेगी; या (ख) ऐसे व्यक्ति को खंड (7) के उप-खंड (क) और (ख) के तहत संसद द्वारा बनाए गए किसी कानून के प्रावधानों के अनुसार निरुद्ध न किया गया हो।

(5) जब किसी व्यक्ति को निवारक निरोध का प्रावधान करने वाले किसी कानून के तहत जारी आदेश के अनुसरण में निरुद्ध किया जाता है, तो आदेश जारी करने वाला प्राधिकारी, यथाशीघ्र, उस व्यक्ति को उन आधारों से अवगत कराएगा जिन पर वह आदेश जारी किया गया है और उसे आदेश के विरुद्ध प्रतिवेदन करने का शीघ्रतम अवसर प्रदान करेगा।

(6) खंड (5) की किसी भी बात के लिए यह आवश्यक नहीं होगा कि वह उस खंड में संदर्भित आदेश जारी करने वाले प्राधिकारी को ऐसे तथ्यों को प्रकट करने के लिए बाध्य करे, जिन्हें प्रकट करना ऐसा प्राधिकारी लोक हित के विरुद्ध समझता हो।

(7) संसद कानून द्वारा निर्धारित कर सकती है— (क) वे परिस्थितियां जिनके तहत, और मामलों के वे वर्ग या श्रेणियां जिनमें, किसी व्यक्ति को खंड (4) के उप-खंड (क) के प्रावधानों के अनुसार सलाहकार बोर्ड की राय प्राप्त किए बिना निवारक निरोध का प्रावधान करने वाले किसी कानून के तहत तीन महीने से अधिक की अवधि के लिए निरुद्ध किया जा सकता है; (ख) वह अधिकतम अवधि जिसके लिए किसी भी व्यक्ति को मामलों के किसी वर्ग या श्रेणियों में निवारक निरोध का प्रावधान करने वाले किसी कानून के तहत निरुद्ध किया जा सकता है; और (ग) खंड (4) के उप-खंड (क) के तहत एक जांच में सलाहकार बोर्ड द्वारा अपनाई जाने वाली प्रक्रिया।"

15. **मल्लाडा के. श्री राम बनाम तेलंगाना राज्य 2022 लाइव लॉ (एससी) 358** के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने संविधान के अनुच्छेद 22 के तहत निवारक निरोध की शक्तियों का प्रयोग केवल संवैधानिक रूप से अनिवार्य सुरक्षा उपायों के भीतर ही करने की आवश्यकता पर बल दिया, जिसके बिना यह दमनकारी बन जाता है:

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

"निवारक निरोध की शक्तियाँ असाधारण और यहाँ तक कि दमनकारी हैं। औपनिवेशिक काल से अपनी उत्पत्ति का पता लगाते हुए, उन्हें दुरुपयोग के खिलाफ सख्त संवैधानिक सुरक्षा उपायों के साथ जारी रखा गया है। संविधान के अनुच्छेद 22 को विशेष रूप से शामिल किया गया था और संविधान सभा में इस पर व्यापक बहस हुई थी ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि निवारक निरोध की असाधारण शक्तियाँ राज्य के प्राधिकार के दमनकारी और मनमाने प्रयोग में न बदल जाएँ।"

16. डॉ. राम मनोहर लोहिया बनाम बिहार राज्य 1966 एआईआर 740 का मामला सर्वोच्च न्यायालय का एक ऐतिहासिक निर्णय है जो 'लोक व्यवस्था' और 'राज्य की सुरक्षा' के दायरे को निर्धारित करता है, जो दोनों ही निवारक निरोध के आधार हैं; इसमें सर्वोच्च न्यायालय ने माना:

"लोक व्यवस्था यदि भंग होती है, तो उसका परिणाम सार्वजनिक अशांति होना चाहिए। शांति का प्रत्येक उल्लंघन सार्वजनिक अशांति का कारण नहीं बनता है। जब दो शराबी आपस में झगड़ते और लड़ते हैं तो अशांति होती है लेकिन सार्वजनिक अशांति नहीं होती। उनसे कानून-व्यवस्था बनाए रखने की शक्तियों के तहत निपटा जा सकता है लेकिन उन्हें इस आधार पर निरुद्ध नहीं किया जा सकता कि वे लोक व्यवस्था को बिगाड़ रहे थे। मान लीजिए कि वे दो लड़ाके विरोधी समुदायों के थे और उनमें से एक ने सांप्रदायिक भावनाओं को भड़काने की कोशिश की। समस्या अभी भी कानून-व्यवस्था की ही है, लेकिन यह सार्वजनिक अशांति की आशंका पैदा करती है। अन्य उदाहरणों की कल्पना की जा सकती है। कानून का उल्लंघन हमेशा व्यवस्था को प्रभावित करता है लेकिन इससे पहले कि यह कहा जाए कि यह लोक व्यवस्था को प्रभावित करता है, इसे बड़े पैमाने पर समुदाय या जनता को प्रभावित करना चाहिए। [...]"

17. इस प्रकार यह प्रतीत होगा कि जिस तरह इस न्यायालय के निर्णयों में 'लोक व्यवस्था' को 'राज्य की सुरक्षा' को प्रभावित करने वाली गड़बड़ियों की तुलना में कम गंभीरता वाली गड़बड़ी माना गया था, उसी तरह 'कानून और व्यवस्था' में भी 'लोक व्यवस्था' को प्रभावित करने वाली गड़बड़ियों की तुलना में कम गंभीरता वाली गड़बड़ियाँ शामिल हैं। व्यक्ति को तीन संकेंद्रित वृत्तों की कल्पना करनी चाहिए। कानून और व्यवस्था सबसे बड़े वृत्त का प्रतिनिधित्व करती है जिसके भीतर अगला वृत्त लोक व्यवस्था का प्रतिनिधित्व करता है और सबसे छोटा वृत्त राज्य की सुरक्षा

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"

का प्रतिनिधित्व करता है। तब यह देखना आसान है कि एक कृत्य कानून और व्यवस्था को प्रभावित कर सकता है लेकिन लोक व्यवस्था को नहीं, ठीक उसी तरह जैसे कोई कृत्य लोक व्यवस्था को प्रभावित कर सकता है लेकिन राज्य की सुरक्षा को नहीं।"

18. इस सिद्धांत की पुष्टि *अमिना बेगम बनाम तेलंगाना राज्य, 2022 एससीसी ऑनलाइन एससी 424* के निर्णय में फिर से की गई, जहाँ सर्वोच्च न्यायालय ने दोहराया कि केवल "सभी मामलों में कानून का उल्लंघन सार्वजनिक अशांति का कारण नहीं बनता है।" सर्वोच्च न्यायालय ने दोहराया कि:

"'लोक व्यवस्था' बनाए रखने और 'कानून-व्यवस्था' की स्थिति पैदा करने वाले अपराधों के बीच अंतर – किसी कृत्य को 'लोक व्यवस्था' में व्यवधान के रूप में योग्य होने के लिए, उस गतिविधि का प्रभाव आम जनता पर होना चाहिए और उससे भय, दहशत या असुरक्षा की भावनाएं पैदा होनी चाहिए। निजी व्यक्तियों को प्रभावित करने वाले छिटपुट कृत्य, और इसी तरह के कृत्यों की पुनरावृत्ति सार्वजनिक जीवन के सहज प्रवाह को प्रभावित नहीं करेगी। [...] निवारक निरोध कानून 'आपातकालीन स्थितियों से निपटने के लिए आरक्षित एक असाधारण उपाय' हैं और इनका उपयोग 'कानून-व्यवस्था' लागू करने के एक उपकरण के रूप में नहीं किया जाना चाहिए। [...] जब निरुद्ध व्यक्ति से निपटने के लिए आपराधिक कानून के सामान्य प्रावधान ही पर्याप्त होते, तो राज्य के लिए निवारक निरोध अधिनियम के प्रावधानों को लागू करने का कोई कारण नहीं था, जो कि एक असाधारण कानून है।"

19. इस बिंदु को *अरुण घोष बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, 1970 (1) एससीसी 98* के मामले में स्पष्ट किया गया है, जहाँ 'लोक व्यवस्था' की अवधारणा को सर्वोच्च न्यायालय के माननीय न्यायाधीशों द्वारा निम्नलिखित शब्दों में स्पष्ट किया गया है:

"3. अधिवक्ता का तर्क यह है कि ये व्यक्तियों के विरुद्ध किए गए छिटपुट कृत्य हैं और लोक व्यवस्था को नष्ट करने वाले नहीं हैं, और इसलिए उसे लोक व्यवस्था के प्रतिकूल तरीके से कार्य करने से रोकने के आभासी आधार पर निरुद्ध किया जाना न्यायोचित नहीं था। इस तर्क के समर्थन में इस न्यायालय के तीन मामलों का संदर्भ दिया गया है: डॉ. राम मनोहर लोहिया बनाम बिहार राज्य, पुष्कर मुखर्जी और अन्य

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



बनाम पश्चिम बंगाल राज्य तथा श्यामल चक्रवर्ती बनाम पुलिस आयुक्त, कलकत्ता और अन्य। डॉ. राम मनोहर लोहिया के मामले में इस न्यायालय ने कानून और व्यवस्था बनाए रखने तथा उसके व्यवधान और लोक व्यवस्था बनाए रखने तथा उसके व्यवधान के बीच अंतर को रेखांकित किया था। लोक व्यवस्था के बारे में कहा गया था कि इसमें कानून और व्यवस्था की तुलना में समुदाय का अधिक हिस्सा शामिल होता है। लोक व्यवस्था पूरे देश या किसी निर्दिष्ट इलाके को ध्यान में रखते हुए समुदाय के जीवन की एक सहज गति है। लोक व्यवस्था के व्यवधान को व्यक्तियों के विरुद्ध निर्देशित उन कृत्यों से अलग किया जाना चाहिए जो समाज को इस हद तक परेशान नहीं करते कि सार्वजनिक शांति में सामान्य व्यवधान उत्पन्न हो। यह व्यवधान की डिग्री और किसी इलाके में समुदाय के जीवन पर उसका प्रभाव है जो यह निर्धारित करता है कि क्या व्यवधान केवल कानून और व्यवस्था का उल्लंघन है। उदाहरण के लिए, एक आदमी दूसरे को चाकू मार देता है। लोग स्तब्ध हो सकते हैं और परेशान भी हो सकते हैं, लेकिन समुदाय का जीवन एक सहज गति से चलता रहता है, भले ही कोई इस कृत्य को कितना भी नापसंद क्यों न करे। एक शहर का दूसरा मामला लें जहाँ सांप्रदायिक तनाव है। वहाँ एक आदमी दूसरे समुदाय के व्यक्ति को चाकू मार देता है। इसके निहितार्थ अधिक गहरे हैं और यह जीवन की सहज गति को प्रभावित करता है तथा लोक व्यवस्था खतरे में पड़ जाती है क्योंकि ऐसे कृत्य के परिणाम समुदाय के बड़े वर्गों को प्रभावित करते हैं और उन्हें कानून और व्यवस्था का और अधिक उल्लंघन करने तथा लोक व्यवस्था को नष्ट करने के लिए उकसाते हैं। एक कृत्य अपने आप में अपनी गंभीरता का निर्धारक नहीं होता है। अपनी गुणवत्ता में यह दूसरे से भिन्न नहीं हो सकता है लेकिन अपनी क्षमता (potentiality) में यह बहुत भिन्न हो सकता है। लड़कियों पर हमले का मामला लें। एक होटल का मेहमान आधा दर्जन चेम्बर मेड्स (कमरा साफ करने वाली युवतियों) को चूम सकता है या उनके साथ अनुचित व्यवहार कर सकता है। वह उन्हें और प्रबंधन को भी परेशान कर सकता है लेकिन वह लोक व्यवस्था में व्यवधान उत्पन्न नहीं करता है। वह लड़कियों में से किसी एक के दोस्तों के साथ झगड़ा भी कर सकता है लेकिन तब भी यह केवल कानून और व्यवस्था के उल्लंघन का मामला होगा। एक अन्य व्यक्ति का मामला लें जो सुनसान जगहों पर महिलाओं से छेड़छाड़ करता है। उसकी गतिविधियों के परिणामस्वरूप स्कूल जाने वाली लड़कियां निरंतर खतरे और डर में रहती

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

हैं। अपने सामान्य काम से जाने वाली महिलाओं को रास्ते में रोके जाने और हमला किए जाने का डर रहता है। इस व्यक्ति की गतिविधि अपनी मूल गुणवत्ता में दूसरे व्यक्ति के कृत्य से भिन्न नहीं है, लेकिन इसकी क्षमता में और सार्वजनिक शांति पर इसके प्रभाव में एक बहुत बड़ा अंतर है। सुनसान जगहों पर लड़कियों से छेड़छाड़ करने वाले व्यक्ति का कृत्य जीवन की उस सहज गति में व्यवधान उत्पन्न करता है जो लोक व्यवस्था की पहली आवश्यकता है। वह समाज और समुदाय को परेशान करता है। उसका कृत्य सभी महिलाओं को उनके सम्मान के प्रति आशंकित करता है और यह कहा जा सकता है कि वह लोक व्यवस्था में व्यवधान उत्पन्न कर रहा है, न कि केवल व्यक्तिगत कार्य कर रहा है जिन पर आपराधिक अभियोजन एजेंसियों द्वारा संज्ञान लिया जा सकता है। इसलिए इसका अर्थ यह है कि यह प्रश्न कि क्या किसी व्यक्ति ने केवल कानून और व्यवस्था का उल्लंघन किया है या उसने लोक व्यवस्था में व्यवधान उत्पन्न करने वाले तरीके से कार्य किया है, डिग्री का और समाज पर उस कृत्य की पहुंच के विस्तार का प्रश्न है। फ्रांसीसी लोग कानून और व्यवस्था तथा लोक व्यवस्था में अंतर करने के लिए बाद वाले को 'ऑर्डर पब्लिक' के रूप में नामित करते हैं। उत्तरार्द्ध अभिव्यक्ति को कानून और व्यवस्था के सामान्य रखरखाव से कुछ अधिक अर्थ रखने के रूप में मान्यता दी गई है। न्यायमूर्ति रामास्वामी ने 1968 की रिट याचिका संख्या 179 में लोक व्यवस्था के उन गंभीर और बड़े हुए उल्लंघनों, जो समुदाय को प्रभावित करते हैं या बड़े पैमाने पर जनहित को खतरे में डालते हैं, और शांति के उन छोटे उल्लंघनों, जो बड़े पैमाने पर जनता को प्रभावित नहीं करते हैं, के बीच एक सीमा रेखा खींची। उन्होंने सार्वजनिक और निजी अपराधों के बीच एक सादृश्य स्थापित किया। यह सादृश्य उपयोगी है लेकिन इसे बहुत आगे तक नहीं ले जाया जाना चाहिए। व्यक्तियों या व्यक्तिगत रूप से किसी के खिलाफ निर्देशित बड़ी संख्या में कृत्य मिलकर लोक व्यवस्था का उल्लंघन बन सकते हैं। डॉ. राम मनोहर लोहिया के मामले में सरकार और हिदायतुल्लाह, न्यायाधीशों द्वारा उदाहरण दिए गए थे। वे दिखाते हैं कि कैसे विभिन्न संदर्भों में समान कृत्य एक तरफ कानून और व्यवस्था को और दूसरी तरफ लोक व्यवस्था को अलग-अलग तरह से प्रभावित करते हैं। यह हमेशा नुकसान की डिग्री और समुदाय पर उसके प्रभाव का प्रश्न होता है। पूछने के लिए प्रश्न यह है कि क्या यह समुदाय के जीवन की धारा में व्यवधान पैदा करता है जो लोक व्यवस्था के व्यवधान के बराबर हो या क्या यह समाज की शांति

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

को भंग किए बिना केवल एक व्यक्ति को प्रभावित करता है? इस प्रश्न का सामना हर मामले में तथ्यों के आधार पर करना पड़ता है। ऐसा कोई फॉर्मूला नहीं है जिसके द्वारा एक मामले को दूसरे मामले से अलग किया जा सके।"

20. इस संबंध में, **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य बनाम संजय प्रताप गुप्ता उर्फ पप्पू और अन्य, (2004) 8 एससीसी 591** का संदर्भ लिया जा सकता है। संजय प्रताप गुप्ता उर्फ पप्पू (उपरोक्त) के मामले में यह माना गया है:

"14. यह रुख कि लोक व्यवस्था प्रभावित होने की बात मानने के लिए एक अकेला कृत्य पर्याप्त नहीं माना जा सकता, स्पष्ट रूप से आधारहीन है। कृत्यों की संख्या मायने नहीं रखती। जो देखा जाना चाहिए वह यह है कि उस कृत्य का जीवन की सहज गति पर क्या प्रभाव पड़ा, समाज पर उसकी पहुंच का विस्तार और उसका प्रभाव क्या है।"

21. **नेनावत बुज्जी बनाम तेलंगाना राज्य, 2024 एससीसी ऑनलाइन एससी 367** में, सर्वोच्च न्यायालय ने उन कसौटियों पर विस्तृत दिशानिर्देश तैयार किए हैं जिनके आधार पर ही निरोध प्राधिकारी के आदेश को निम्नानुसार बरकरार रखा जा सकता है:

"43. हम अपने निष्कर्षों को संक्षेप में निम्नानुसार प्रस्तुत करते हैं:-

(i) निरोध प्राधिकारी को अपेक्षित व्यक्तिपरक संतुष्टि तक पहुँचने के लिए केवल प्रासंगिक और महत्वपूर्ण सामग्री पर ही विचार करना चाहिए,

(ii) यह एक अलिखित संवैधानिक और प्रशासनिक कानून है कि जहाँ कहीं भी निर्णय लेने का कार्य वैधानिक पदाधिकारी की व्यक्तिपरक संतुष्टि पर सौंपा जाता है, वहाँ प्रासंगिक और सन्निकट मामलों पर अपना दिमाग लगाने तथा अप्रासंगिक व दूरस्थ मामलों से बचने का एक अंतर्निहित कर्तव्य होता है,

(iii) इस सुस्थापित सिद्धांत के बारे में कोई विवाद नहीं हो सकता कि निरोध आदेश के लिए निरोध प्राधिकारी की व्यक्तिपरक संतुष्टि की आवश्यकता होती है, जिस पर सामान्यतः सामग्री की अपर्याप्तता के लिए न्यायालय द्वारा सवाल नहीं उठाया जा सकता। फिर भी, यदि निरोध प्राधिकारी प्रासंगिक परिस्थितियों पर विचार नहीं करता है

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

या पूरी तरह से अनावश्यक, अमहत्वपूर्ण और अप्रासंगिक परिस्थितियों पर विचार करता है, तो ऐसी व्यक्तिपरक संतुष्टि दूषित हो जाएगी,

(iv) निरोध के आदेश को निरस्त करने में, न्यायालय व्यक्तिपरक संतुष्टि की शुद्धता पर निर्णय देने के लिए नहीं बैठता है। न्यायालय की उत्सुकता यह पता लगाने की होनी चाहिए कि क्या व्यक्तिपरक संतुष्टि तक पहुँचने के लिए निर्णय लेने की प्रक्रिया वस्तुनिष्ठ तथ्यों पर आधारित है या किसी मनमर्जी, द्वेष या अप्रासंगिक विचारों या विवेक का इस्तेमाल न करने से प्रभावित है,

(v) निरोध आदेश जारी करते समय, प्राधिकारी को एक उचित संतुष्टि तक पहुँचना चाहिए जो निरोध के आदेश में स्पष्ट रूप से और स्पष्ट शब्दों में परिलक्षित होनी चाहिए।

(vi) संतुष्टि का अनुमान आदेश में केवल इस कथन से नहीं लगाया जा सकता कि "निरुद्ध व्यक्ति को लोक व्यवस्था बनाए रखने के प्रतिकूल तरीके से कार्य करने से रोकना आवश्यक था"। बल्कि निरोध प्राधिकारी को अपने समक्ष मौजूद सामग्री से निरोध आदेश को सही ठहराना होगा और अपनी संतुष्टि व्यक्त करते समय उक्त सामग्री पर विचार करने की प्रक्रिया निरोध आदेश में परिलक्षित होनी चाहिए।

(vii) कानून-व्यवस्था की स्थिति से निपटने में राज्य की पुलिस मशीनरी की अक्षमता, निवारक निरोध के क्षेत्राधिकार को लागू करने का बहाना नहीं होनी चाहिए,

(viii) ऐसे आदेश का औचित्य निरुद्ध व्यक्ति को दिए गए आधार में मौजूद होना चाहिए ताकि निरोध आदेश को बल मिले। इसे निरुद्ध व्यक्ति को न दिए गए कारणों/आधारों द्वारा स्पष्ट नहीं किया जा सकता है। प्राधिकारी का निर्णय रिकॉर्ड पर उपलब्ध प्रासंगिक और महत्वपूर्ण तथ्यों पर विवेक लगाने का स्वाभाविक परिणाम होना चाहिए, और

(ix) निवारक निरोध के आदेश को न्यायोचित ठहराने वाली उचित संतुष्टि तक पहुँचने के लिए, निरोध प्राधिकारी को, सबसे पहले, संभावित निरुद्ध व्यक्ति के खिलाफ पेश की गई सामग्री की जांच करनी चाहिए ताकि वह खुद को संतुष्ट कर सके कि क्या उसका आचरण या पिछला इतिहास यह दर्शाता है कि वह लोक व्यवस्था बनाए रखने के

प्रतिकूल तरीके से कार्य करता रहा है और, दूसरा, यदि उपरोक्त संतुष्टि हो जाती है, तो उसे आगे यह विचार करना चाहिए कि क्या यह संभावना है कि उक्त व्यक्ति निकट भविष्य में लोक व्यवस्था के प्रतिकूल तरीके से कार्य करेगा जब तक कि उसे निरोध का आदेश पारित करके ऐसा करने से रोका न जाए। व्यक्तिपरक संतुष्टि पर आधारित निरोध आदेश पारित करने के लिए, उपरोक्त पहलुओं और बिंदुओं का उत्तर संभावित निरुद्ध व्यक्ति के खिलाफ होना चाहिए। प्रासंगिक, सन्निकट सामग्री और महत्वपूर्ण मामलों पर विवेक न लगाना निरोध प्राधिकारी की ओर से वैधानिक संतुष्टि के अभाव को दर्शाएगा।"

22. इस मामले में सलाहकार बोर्ड के आदेश पर आते हुए, सर्वोच्च न्यायालय की तीन-न्यायाधीशों की पीठ ने **नेनावत बुज्जी बनाम तेलंगाना राज्य, 2024 एससीसी ऑनलाइन एससी 367** में उस 'सक्रिय भूमिका' को स्पष्ट किया, जो निवारक निरोध आदेशों की समीक्षा करते समय एक सलाहकार बोर्ड से निभाने की अपेक्षा की जाती है। न्यायालय ने स्पष्ट किया कि बोर्ड को न केवल निरोध प्राधिकारी की व्यक्तिपरक संतुष्टि का विश्लेषण करना चाहिए, बल्कि यह भी जांचना चाहिए कि क्या "... निरोध अधिनियम की भावना के विरुद्ध है या न्यायालयों द्वारा प्रतिपादित कानून के उल्लंघन में है"।

23. सलाहकार बोर्ड के समक्ष अपनाई जाने वाली प्रक्रिया और एक निरुद्ध व्यक्ति को उपलब्ध अधिकारों की व्याख्या इस तरह से की गई है जो बोर्ड के समक्ष सुनवाई को काफी हद तक अप्रभावी बना देती है। सबसे गंभीर निश्चित रूप से कानूनी प्रतिनिधित्व (अधिवक्ता रखने) के अधिकार से इनकार करना है, लेकिन कुछ और भी उल्लंघन हैं जो प्रक्रिया में अप्रभावी होने में योगदान करते हैं। संक्षेप में, सर्वोच्च न्यायालय के पिछले निर्णयों पर भरोसा करते हुए, यह देखा जाएगा कि संवैधानिक न्यायालयों द्वारा सलाहकार बोर्ड पर रखा गया अत्यधिक भरोसा गलत है, और अवैध निरोध के खिलाफ एक निरुद्ध व्यक्ति के लिए सबसे प्रभावी उपाय एक संवैधानिक न्यायालय के समक्ष बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका ही बनी हुई है।

24. एक सलाहकार बोर्ड में उच्च न्यायालय के वर्तमान या सेवानिवृत्त न्यायाधीश, या ऐसे व्यक्ति शामिल होते हैं जो उच्च न्यायालय के न्यायाधीश नियुक्त होने की योग्यता रखते हैं। इसे निरोध आदेश पारित होने की तिथि से 3 महीने के भीतर एक रिपोर्ट तैयार करनी होती है,

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

जिसका कार्य यह पता लगाना होता है कि क्या ऐसे निरोध के लिए 'पर्याप्त कारण' हैं। ऐसा निर्धारण करने के लिए, बोर्ड को अपनी स्वयं की प्रक्रिया तैयार करने का अधिकार है और वह केवल अपने समक्ष प्रस्तुत रिकॉर्ड को देखने तक ही सीमित नहीं है, बल्कि वह उपयुक्त सरकार से या स्वयं निरुद्ध व्यक्ति से ऐसी और जानकारी भी मांग सकता है जिसे वह आवश्यक समझे।

25. इस संदर्भ में, कानून मनमाने निरोध को रोकने के लिए जो 2 प्रासंगिक सुरक्षा उपाय प्रदान करता है वे हैं - (i) निरोध प्राधिकारी को 'संतुष्ट' होना होगा कि किसी व्यक्ति को निरुद्ध करने की आवश्यकता है, अर्थात् विवेक का इस्तेमाल होना चाहिए (जिसे 'व्यक्तिपरक संतुष्टि' कहा जाता है); और (ii) यह पता लगाने के लिए एक सलाहकार बोर्ड द्वारा समीक्षा कि क्या उस व्यक्ति को निरुद्ध करने के लिए 'पर्याप्त कारण' था। यह सुस्थापित कानून है कि यह 'व्यक्तिपरक संतुष्टि' सामान्यतः अनुच्छेद 226 या 32 के तहत चुनौती के योग्य नहीं है। इसके अलावा, सलाहकार बोर्ड के समक्ष कार्यवाही गैर-न्यायसंगत है, अर्थात् चूंकि बोर्ड केवल एक सलाहकार क्षमता में कार्य करता है, इसलिए उसकी राय न्यायिक समीक्षा का विषय-वस्तु नहीं हो सकती है।

26. यह ध्यान में रखना महत्वपूर्ण है कि सलाहकार बोर्ड के समक्ष पूरी कसरत के दौरान, संविधान का अनुच्छेद 22(3) आपराधिक न्याय प्रणाली में उपलब्ध सबसे मूल्यवान अधिकारों में से एक से इनकार करता है, अर्थात् अपनी पसंद के कानूनी व्यवसायी (अधिवक्ता) से परामर्श करने और उसके द्वारा अपना बचाव कराने का अधिकार।

27. **नेनावत बुज्जी (उपरोक्त)** में सर्वोच्च न्यायालय का फैसला "सलाहकार बोर्ड की भूमिका" पर अपनी चर्चा के लिए अद्वितीय है। हमारे लाभ के लिए, इसने संक्षेप में संपुटित किया कि एक सलाहकार बोर्ड से क्या करने की अपेक्षा की जाती है। पैराग्राफ 57 में यह निम्नानुसार चार प्रकार के कार्यों को निर्धारित करता है:

- अपने समक्ष रखी गई सामग्री पर विचार करना;
- यदि आवश्यक समझा जाए तो और जानकारी मांगना;
- निरुद्ध व्यक्ति को सुनना, यदि वह सुने जाने की इच्छा रखता है और;

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

- लिखित में एक रिपोर्ट प्रस्तुत करना कि क्या "ऐसे निरोध" के लिए पर्याप्त कारण हैं या क्या निरोध न्यायोचित है।

28. जो थोड़ा हैरान करने वाला है वह निर्णय में इस विवरण के बाद आता है और इसे पूर्ण रूप से उद्धृत किया जाना उचित है:

"58. एक सलाहकार बोर्ड निवारक निरोध के आदेश के लिए केवल रबर-स्टैम्प लगाने वाला प्राधिकारी नहीं है। जब भी समीक्षा के लिए उसके समक्ष कोई निरोध आदेश रखा जाता है, तो उसे यह पता लगाने में सक्रिय भूमिका निभानी चाहिए कि कानून के तहत निरोध न्यायोचित है या नहीं। जहाँ वह पाता है कि ऐसा निरोध आदेश अधिनियम की भावना के विरुद्ध है या न्यायालयों द्वारा प्रतिपादित कानून के उल्लंघन में है, तो वह निश्चित रूप से यह राय दे सकता है कि निरोध आदेश टिकाऊ नहीं है और अपनी रिपोर्ट में इसे व्यक्त करने से कतराना नहीं चाहिए।

59. जैसा कि हमने ऊपर कहा है, निवारक निरोध एक दमनकारी उपाय होने के कारण, शक्तियों के मनमाने या रूटीन प्रयोग के परिणामस्वरूप होने वाले किसी भी निरोध आदेश को शुरुआत में ही कुचल दिया जाना चाहिए। इसे पहले उपलब्ध स्तर पर ही खारिज कर दिया जाना चाहिए और इस प्रकार, यह सलाहकार बोर्ड ही होना चाहिए जिसे न केवल निरोध प्राधिकारियों की व्यक्तिपरक संतुष्टि बल्कि सभी पहलुओं पर विचार करना चाहिए कि क्या ऐसी संतुष्टि निरुद्ध व्यक्ति के निरोध को न्यायोचित ठहराती है। सलाहकार बोर्ड को यह विचार करना चाहिए कि क्या निरोध न केवल निरोध प्राधिकारी की नजर में बल्कि कानून की नजर में भी आवश्यक है।"

29. इसलिए न्यायालय सलाहकार बोर्ड की भूमिका को न केवल यह विश्लेषण करने के रूप में समझाता है कि क्या निरोध के लिए 'पर्याप्त कारण' है, बल्कि यह भी कि क्या निरोध का आदेश न्यायालयों द्वारा प्रतिपादित कानून के विरुद्ध है, जिससे इसके दायरे में व्यक्ति को निरुद्ध करते समय प्रक्रिया में संभावित उल्लंघन भी शामिल हो जाता है। इस अर्थ में, यह अनुच्छेद 32 या 226 के तहत शक्तियों का प्रयोग करने वाले 'न्यायालय' के कार्य और अनुच्छेद 22 के तहत एक सलाहकार बोर्ड के कार्य को समान मानता प्रतीत होता है।

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

30. सलाहकार बोर्ड की भूमिका के प्रति दृष्टिकोण में बदलाव, जैसा कि सर्वोच्च न्यायालय ने *नेनावत बुज्जी (उपरोक्त)* के पैराग्राफ 49 में समझाया है, ऐसा प्रतीत होता है ताकि अवैध निरोधों को "शुरुआत में ही कुचल दिया" जा सके। हालांकि यह आदर्श होगा, लेकिन पिछले कुछ वर्षों के निर्णयों ने सलाहकार बोर्ड के समक्ष आने वाले निरुद्ध व्यक्ति के अधिकारों को गंभीर रूप से सीमित कर दिया है, जो प्रभावी रूप से बोर्ड के समक्ष कार्यवाही को उस तरह से मामले का न्यायनिर्णयन करने के मामले में अप्रभावी बना देते हैं जैसे एक कानून की न्यायालय करती है। इनमें से कुछ कठौतियां निम्नानुसार हैं:

- निरुद्ध व्यक्ति को अधिवक्ता के माध्यम से उपस्थित होने का कोई अधिकार नहीं है और उसका प्रतिनिधित्व केवल एक 'मित्र' के माध्यम से किया जा सकता है, यदि निरुद्ध व्यक्ति विशेष रूप से ऐसा अनुरोध करता है।
- निरुद्ध व्यक्ति को अपने खिलाफ गवाही देने वाले गवाहों से जिरह करने का कोई अधिकार नहीं है; न्यायालय यहाँ तक मानता है कि सलाहकार बोर्ड को अग्रेषित किए जाने वाले लिखित प्रतिवेदन को भी किसी कानूनी व्यवसायी द्वारा "विस्तृत" नहीं किया जा सकता है।
- बोर्ड पर निरुद्ध व्यक्ति को व्यक्तिगत सुनवाई प्रदान करने की कोई बाध्यता नहीं है; परिणामस्वरूप, जब तक बोर्ड द्वारा लिखित प्रतिवेदन पर विचार किया जाता है, तब तक मौखिक सुनवाई न प्रदान करना प्रक्रिया में 'अतार्किक' नहीं माना जाता है।
- बोर्ड के समक्ष कार्यवाही को न तो सार्वजनिक किया जाता है और न ही रिपोर्ट और दस्तावेज निरुद्ध व्यक्ति के साथ साझा किए जाते हैं।
- बोर्ड के लिए एक सकारण आदेश पारित करना अनिवार्य नहीं है, हालांकि मुख्य कारणों की एक संक्षिप्त अभिव्यक्ति "वांछनीय" है।

31. ये कम किए गए अधिकार बोर्ड के समक्ष प्रक्रिया को अत्यंत अपारदर्शी और निवारक निरोध के तहत निरुद्ध व्यक्ति के लिए नेविगेट करना कठिन बना देते हैं। हर कदम पर बोझ निरुद्ध व्यक्ति पर डाला जाता है कि वह अपने लिए उपलब्ध अधिकारों का लाभ उठाए, जबकि साथ ही

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

उसे किसी भी कानूनी प्रतिनिधित्व से वंचित कर दिया जाता है, सिवाय इसके कि वह स्वयं या किसी के माध्यम से अनुच्छेद 226 या अनुच्छेद 32 के तहत रिट क्षेत्राधिकार का आह्वान करे।

32. इस मामले में सलाहकार बोर्ड ने राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम के तहत किसी व्यक्ति के निरोध की बुनियादी आवश्यकताओं पर भी विचार नहीं किया है।

33. इस संबंध में प्रासंगिक कानून पर विचार करने के बाद, यह स्पष्ट है कि याचिकाकर्ता ने, अधिक से अधिक, कानून-व्यवस्था का उल्लंघन किया है। उसके कृत्य ने समाज के जीवन की सहज गति को प्रभावित नहीं किया। किसी भी समुदाय के लिए इसके कोई परिणाम नहीं हुए। उसके कृत्य ने लोक व्यवस्था को नष्ट नहीं किया। प्रतिवादियों का ऐसा कोई मामला नहीं है कि याचिकाकर्ता का कृत्य ऐसा था जिससे उसके प्रतिद्वंद्वियों के अलावा किसी को/किसी चीज़ को किसी भी स्तर का नुकसान पहुँचा हो। इसलिए, हमारा यह सुदृढ़ विचार है कि, सर्वोच्च न्यायालय के *नेनावत बुज्जी (उपरोक्त)* के मामले में दिए गए निर्णय के आलोक में, याचिकाकर्ता का निरोध आदेश कानून-व्यवस्था की स्थिति से निपटने में राज्य पुलिस की अक्षमता को दर्शाता है। याचिकाकर्ता का निरोध आदेश प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा पारित किया गया था। प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा दर्ज की गई संतुष्टि रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री के सही मूल्यांकन पर आधारित नहीं है। केंद्र सरकार और सलाहकार बोर्ड ने भी प्रासंगिक तथ्यों और कानून पर अपना विवेक नहीं लगाया है।

34. तदनुसार, याचिकाकर्ता का निरोध आदेश अवैध माना जाता है और याचिकाकर्ता के पक्ष में बंदी प्रत्यक्षीकरण की रिट जारी की जाती है, जिसमें इस आदेश की प्रमाणित प्रति प्रस्तुत होने के 24 घंटे के भीतर उसे जेल से रिहा करने का निर्देश दिया जाता है।

35. ऊपर उल्लिखित बंदी प्रत्यक्षीकरण रिट याचिका **स्वीकार** की जाती है।

(न्यायमूर्ति विनय कुमार द्विवेदी) (न्यायमूर्ति सिद्धार्थ)

8 जून, 2026

रुचि अग्रहरी